P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 **SHRINKHALA :** VOL-II * ISSUE-I*September-2014
E: ISSN NO.: 2349 – 980X

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थ अंक के चार श्रेष्ठ श्लोकों की वर्तमान समय में उपादेयता

रेखा सिंह
प्रवक्ता
संस्कृत विभाग
रा0 बा0 इ0 का0 दिबियापुर, औरैया

सारांश

सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में यह कथन अति प्रसिद्ध है –

काव्येषु नाटकंरम्यं तत्र रम्या शकुन्तला।
तत्रापि च चतुर्थोऽकः तत्र श्लोक चतुष्टयम्।।

अर्थात् काव्य मात्र में नाटक रमणीय है, नाटकों में 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' रमणीय है, 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' में चतुर्थ अंक विशेष रमणीय है और उस चतुर्थ अंक में भी चार श्लोक विशेष रमणीय हैं।

मुख्य श ब्द :कण्ठःस्तम्भितवाष्पवृत्ति, तनयाविष्लेषदुःखैर्नवैः,संयमधनान्, वामाः,दौष्यन्ति, निवेष्य

प्रस्तावना

महाकवि कुलगुरू कालिदास प्रणीत 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' के श्रेष्ठ चतुर्थ अंक (जो कि नाटक का आधार है) में जिन चार श्लोकों को रमणीय माना गया है, उनमें पतिगृह को गमन करती शकुन्तला के पति चक्रवर्ती राजा दुष्यन्त को सन्देश एवं अपने जीवन की द्वितीय भूमिका पत्नी के कर्तव्यक्षेत्र में पदार्पण करती हुई शकुन्तला को सरस एवं सारगर्भित उपदेश तथा शुभाशीष दिया गया है।

युग कोई भी हो अनादिकाल से हमारे देश में परम्परा चली आ रही है कि पुत्री विवाह के बाद किसी की पत्नी बनकर किसी अन्य कुल के प्रति अपनी जिम्मेदारी निभाती है। यदि उसकी भूमिका सटीक नहीं होती तो सर्वप्रथम उसके पितृकुल की आलोचना होती है। ऐसी ही कुछ शंकाओं को ही शायद दृष्टिपथ में रखकर शकुन्तला के संरक्षक, पिता, त्रिकालदर्शी महर्षि कण्व उसे उपदेश एवं आशीर्वाद के रूप में एक ऐसी अमूल्य निधि प्रदान करते हैं जो कालजयी बन जाती है।

जब शकुन्तला की विदा बेला आ जाती है तब संयम रूपीधन वाले महर्षि कण्व अधीर होकर कहने लगते हैं –

यास्त्यद्य शकुन्तलेति – हृदय संस्पृष्टमुत्कण्ठया।
कण्ठः स्तम्भितवाष्पवृत्ति कलुषष्चिन्ताजडं दर्षनम ्।
वैकलव्यं मम तवादीदृशमिदं स्नेहादरण्ययौकसः।
पीड्यन्ते गृहिणः कथं नु तनयाविष्लेषदुःखैर्ननैवः।1

अर्थात् आज शकुन्तला चली जायेगी इसलिए (मेरा) हृदय उत्कण्ठा (दुःख) से परिपूर्ण हो रहा है। आँसुओं के बहने को रोकने के कारण गला रूँध गया है, दृष्टि चिन्ता के कारण जड़ हो गयी है। जब वन में रहने वाले मुझ वनवासी (तपस्वी) को शकुन्तला के प्रति प्रेम के कारण इस प्रकार का दुःख हो रहा है तो गृहस्थ लोगों को नवीन (पहली बार) पुत्री के वियोग से कितना दुःखित होते होंगे ?

महाकवि कालिदास ने महर्षि कण्व का आश्रय लेकर एक–एक शब्द ऐसा कहा है जो सीधा हृदय में असर करता है। उनका लोक व्यवकार का ज्ञान निश्चित रूप से अनुभव की कसौटी में खरा उतरा हुआ है। चाहें जिस जाति, धर्म, कुल व देश की कन्या की विदा बेला हो वहां उपस्थित हर व्यक्ति की आँखें अवश्य नम हो जाती हैं, फिर जिसकी औरस पुत्री की विदाई हो उसकी मनः स्थिति तो बड़ी ही शोचनीय हो जाती है।

चतुर्थ अंक के श्रेष्ठ चार श्लोकों में से द्वितीय श्लोक में महाराज दुष्यन्त के लिए अपना विनम्र सन्देश देते हुए महर्षि कण्व कहते हैं –

अस्मान् साधु विचिन्त्य संयमधनानुच्चैः कुलं चात्मन्
स्त्वय्यस्याः कथमप्यबान्धव कृतां स्नेहप्रवृत्तिं च ताम्।
सामान्यप्रतिपत्तिपूर्वकमियं दारेषुदृष्या त्वया
भाग्यायत्तमतः परं न खलु तद्वाच्यं वधूबन्धुभिः।।[2]

अर्थात् संयम रूपी धन वाले हम लोगों का, अपने उच्च कुल का और तुम्हारी ओर इस (शकुन्तला) के बन्धुओं द्वारा न किये गये उस स्वाभाविक प्रणय–व्यापार का भली–भांति विचार करके तुम इसको अपनी स्त्रियों में सभी के समान गौरव के साथ देखना। इसके आगे (तो) भाग्य के अधीन है, यह हम वधू (कन्या के बन्धुओं) को नहीं कहना चाहिए।

महर्षि कण्व ने कितने कम शब्दों में कितनी सारगर्भित बात कह दी, साथ ही स्पष्ट भी कर दिया कि वधू (कन्या) के सम्बन्धियों को उसकी ससुराल में अधिक हस्तक्षेप नही करना चाहिए।

महर्षि कण्व के इस सन्देश का परीक्षण वर्तमान समय में मैंने जो किया वह अक्षरसः सत्य है क्योंकि वधू के परिजनों का जहां अधिक हस्तक्षेप होता है, वहाँ कलह का वातावरण होता है। समाज में तमाम घर पुत्री के घर में माता–पिता के अनर्गल हस्तक्षेप के कारण टूटते हैं। वर्तमान समय में यदि कन्या के माता–पिता इस सन्देश का सार समझ लें तो समाज में काफी घर टूटने से बच सकते हैं।

शकुन्तला को उपदेश (शिक्षा) देते हुए कण्व श्रेष्ठतम की श्रेणी के तृतीय श्लोक में कहते हैं :–

शुश्रस्व गुरून् कुरू प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने
भर्तुविप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः।।[3]

अर्थात् गुरूजनों की सेवा करना, सपत्नियों (सौतों) के साथ प्रियसखी जैसा व्यवहार करना, तिरस्कृत होने पर क्रोध के कारण पति के प्रतिकूल कार्य न करना, अपने सेवकों के प्रति उदार रहना और अपने भाग्य पर गर्व न करना। इस प्रकार का आचरण करने वाली स्त्रियाँ गृहलक्ष्मी के पद को प्राप्त कर लेती हैं तथा इसके विपरीत आचरण करने वाली कुल के लिए अभिशाप होती हैं।

तत्कालीन परिस्थितियों में बहुपत्नी प्रथा थी, अतः महर्षि कण्व ने सपत्नियों के साथ सखी जैसा व्यवहार करने के लिए शकुन्तला को कहा। सम्प्रति बहुपत्नी प्रथा नहीं है। अतः यह बातें आज की वधुओं के लिए नहीं है। कण्व का यह कहना कि पति के द्वारा तिरस्कृत होने पर पति के प्रतिकूल व्यवहार न करना इस आशय को प्रकट करता है कि यदि दो पक्षों के मध्य मनमुटाव हो और एक पक्ष शान्त हो जाता है तो दूसरा अपने आप शान्त हो जाता है। कण्व शकुन्तला को मिथ्याभिमान से दूर रहने के लए तथा सेवकों के प्रति स्नेहपूर्ण व्यवहार करने के लिए कहते हैं। आज की परिस्थितियों को देखते हुए महर्षि कण्व के उपदेश को आत्मसात किया जाये तो निश्चित रूप से वधुओं को सर्वत्र सराहना ही मिलेगी।

विदा बेला में हर पुत्री की आँखों और जुबान में बस एक ही प्रश्न रहता है कि वह पुनः कब अपने पिता के घर आयेगी। शकुन्तला जब ऐसा ही प्रश्न करती है तब महर्षि कण्व उसे धैर्य बंधाते हुए कहते हैं :–

भूत्वा चिराय चतुरन्तमहीसपत्नी दौष्यन्तिमप्रतिरथं तनयं निवेश्य।
भर्त्रा तदर्पितकुटुम्बभरेण सार्धं शान्ते करिष्यसि पदं पुनराश्रमेऽस्मिन्।।[4]

अर्थात् चिरकाल तक चारों समुद्रों तक व्याप्त पृथ्वी की सौत रहकर अपने अद्वितीय महारथी पुत्र दौष्यन्ति (भरत) को राज सिंहासन पर बैठाकर उस (पुत्र को) अपने कुटुम्ब का भार सौंप देने वाले पति के साथ इस शान्त आश्रम में पुनः आकर निवास करोगी।

शकुन्तला के अत्यधिक अधीर होने पर महर्षि कण्व यह भी कह सकते थे कि पति के साथ अथवा अनुमति लेकर जब मन होगा आकर हम सबसे मिल जाना या हम सब जब मन होगा आकर मिल जायेंगे। परन्तु उन्होंने शकुन्तला को दायित्व बोध कराते हुए सही समय पर पुनः तपोवन में आकर रहने के लिए कहा।

वर्तमान समय में आये दिन वधू एवं पति, सास–श्वसुर में मायके जाने को लेकर बहुत से घरों में विवाद देखा जाता है। यदि महर्षि कण्व के इस उपदेश को आत्मसात किया जाय तो, तो निश्चित रूप से ऐसे झगड़ों में कमी आयेगी। साथ ही वधू का मायके एवं ससुराल में गरिमापूर्ण स्थान बना रहेगा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि महाकवि कालिदास ने अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थ अंक में चार श्रेष्ठ (रमणीय) श्लोकों की उपाधि प्राप्त करने वाले श्लोकों में भावों की भागीरथी का ऐसा प्रवाह किया है कि जिसमें अवगाहन कर सुधीजनों ही नहीं अपितु जनसामान्य भी असीम शीतलता का अनुभव करता है। अभिज्ञानशाकुन्तलम् का एक–एक श्लोक सारगर्भित एवं रमणीय है तथापि जो भाव इन चार श्लोकों का है, वह सीधे ह्रदय पर प्रभाव डालता है। मात्र भाव ही नहीं अपितु इनका जो सार है वह हर युग में जन्मी कन्या एवं उसके सम्बन्धियों के लिए अमूल्य निधि हैं, उनकी उपादेयता कालजयी है। इन्हीं गुणों को अपने अन्दर समाहित करने के कारण इन्हें 'तत्रश्लोक चतुष्टयम्' की उपाधि दी गयी।

सन्दर्भ सूची

1. अभिज्ञानशाकुन्तलम् 4/6 डा0 शास्त्री हरिदत्त एवं द्विवेदी शिवबालक
2. अभिज्ञानशाकुन्तलम् 4/17 डा0 शास्त्री हरिदत्त एवं द्विवेदी शिवबालक
3. अभिज्ञानशाकुन्तलम् 4/18 डा0 शास्त्री हरिदत्त एवं द्विवेदी शिवबालक
4. अभिज्ञानशाकुन्तलम् 4/20 डा0 शास्त्री हरिदत्त एवं द्विवेदी शिवबालक